कहानी

१. वैर और वैरी

क्रोध जब स्थायित्व ग्रहण कर लेता है तो वैर का रूप धारण कर लेता है। क्रोध की अवधि सीमित होती है, पर वैर पीढ़ी-दर-पीढ़ी, जन्म-प्रति-जन्म तक भी चलता है। क्रोध घातक है तो वैर महाघातक है। अचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने वैर को क्रोध का अचार या मुरब्बा उसके स्थायित्व को लक्ष्य करके कहा है।

कुलपुत्र का भ्रातृवियोग क्रोध में और क्रोध वैर में बदल गया था। उसने प्रतिज्ञा कर डाली —जब तक मैं अपने भ्रातृहन्ता का वध नहीं कर लूंगा, तब तक घर नहीं लौटूंगा। क्षत्रियों के स्वभाव में यह उक्ति घुलमिल गई है—जिनके शत्रु जीवित डोलें, तिनके जीवन को धिक्कार।

सन्त जन भले ही यह कहते हों कि "बदला" अमानवीय शब्द है। पर क्षत्रियों का मानना यह है कि जब तक शत्रु से बदला न ले लिया जाए, तब तक क्षत्रिय क्षत्रिय नहीं। यह कुलपुत्र भी तो क्षत्रिय था, तो फिर अपने भाई को मारने वाले से बदला लेने की प्रतिज्ञा क्यों न करता?

किसी नगर में एक क्षत्रिय परिवार रहता था। घर में चार प्राणी थे—पति-पत्नी और दो बच्चे। दोनों भाइयों में तीन वर्ष का अन्तर था। बड़ा भाई पाँच वर्ष का था और छोटा दो का, तभी इनके पिता का देहान्त हो गया। असमय में ही ठकुरानी विधवा और बालक अनाथ हो गए। फिर भी ठकुरानी ने हिम्मत नहीं हारी। गुजारे के लिए उसके पति की छोड़ी गई पर्याप्त सम्पत्ति थी। उसने दोनों पुत्रों के लालन-पालन और शिक्षा का कर्तव्य पूरी निष्ठा से निभाया। दोनों भाई लाठी चलाने से लेकर, भाला, खड्ग आदि शस्त्रों का संचालन भी बड़ी कुशलता से करते थे। दोनों मल्लविद्या में भी पारंगत थे। शत्रु की ललकार सुनकर भाइयों की भुजाएँ फड़क उठती थीं। माँ को अपने पुत्रों पर गर्व था। दोनों भाई जब मल्लयुद्ध करने अखाड़े में जाते थे तो माँ उन्हें आशीर्वाद देते समय एक ही बात कहती—

"मेरे दूध की लाज रखना, पिता का नाम ऊँचा करना और यह सिद्ध करके आना कि क्षत्रियपुत्र मरना जानते हैं, डरना नहीं।"

दोनों भाई, जिससे भी भिड़े, उसे पराजित करके ही आये। एक बार बड़े भाई के एक प्रति-द्वन्द्वी ने, जब वह घर लौट रहा था, पीछे से उस पर वार किया और भाग गया। छोटा भाई तो हक्का-बक्का रह गया। उसकी चीख सुनकर माँ दौड़ी आई। पास-पड़ौस के लोग भी इकट्ठे हो गए। माता और भाई का करुण क्रन्दन देखा नहीं जाता था। ठकुरानी पछाड़ें खा रही थी। भाई छाती पीटकर रुदन कर रहा था।

संसार की हर वस्तु क्षणिक है। वियोग का शोक भी समय के साथ घटता है। रोते-रोते तीन चार घड़ी का समय बीता तो माता को पुत्र का और अनुज को अग्रज का शोक कुछ कम हुआ —कुछ स्थिर हो गया। अब वे परिस्थिति पर विचार करने लगे। ठकुरानी सिंहनी-सी उठकर खड़ी हो गई और अपने पुत्र को धिक्कारने लगी—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"तेरे भाई को मारकर हत्यारा भाग गया और तू कायरों की तरह आँसू बहा रहा है ? अब तक की हार-जीत तो अखाड़े के खेल की हार-जीत थी। तेरे क्षात्र तेज की कसौटी तो अब है पुत्र ! उठकर खड़ा हो जा। अपने भ्रातृहन्ता का वध मेरे सामने लाकर करेगा, तब मेरी छाती ठण्डी होगी। क्या मेरा दूध तूने यही दिखाने के लिए पिया था ?"

"माँ, अब कुछ मत कहो।" छोटा कुलपुत्र उठकर खड़ा हो गया—"मेरे भाई को धोखे से मार कर भागने वाला कहीं तो मिलेगा। वह धरती में छिपा होगा तो मैं धरती खोदकर उसे यहीं लाऊँगा। उसे बांधकर तेरे चरणों में डाल दूंगा और तेरे सामने ही उसका वध करूंगा। जहाँ मेरे भाई का खून बहा है, उसी स्थान पर उसका खून बहाऊंगा। माँ, मैं जाता हूँ। अब तभी लौटूँगा, जब अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर लूँगा।

मां, कुलपुत्र को जाते हुए देखती रही। उसे अपने दूध पर विश्वास था। वह जानती थी कि मेरा पुत्र भाई के हत्यारे को लेकर ही लौटेगा। कुलपुत्र चला गया। नगरवालों ने बड़े कुलपुत्र की अन्त्येष्टि की। कुछ लोगों ने टिप्पणी की—

"आवेश में भाई को अग्नि भी नहीं दे गया।"

"क्षत्रिय का क्रोध ऐसा ही होता है।" दूसरे ने टिप्पणी की—"बात पर मरना क्षत्रिय ही जानते हैं।"

× × ×

कुलपुत्र को न नींद की चिन्ता थी, न भोजन की भूख। उसकी आँखें शत्रु को खोजने में लगी थीं। जो भी व्यक्ति उसे संदिग्ध दिखता, वह झपटकर उसके पास पहुँच जाता और पहचान कर कहता—

"जाओ, जाओ, तुम वह नहीं हो।"

उसकी इन हरकतों से उसे लोग पागल समझते थे। यदि गहराई से सोचें तो वह प्रतिशोध ने पागल ही बना दिया था। वृक्ष के मूल में बैठा-बैठा ऊंघता रहता और पत्ता भी खड़कता तो एक दम चौकन्ना हो जाता। गाँव-गाँव, नगर-नगर घूमता था कुलपुत्र। उसके सामने खून से लथपथ भाई का शव बार-बार आ जाता। कभी सोचता, 'जरूरी तो नहीं कि मैं शत्रु को खोज ही लूँ। यदि नहीं खोज पाया तो आत्मदाह कर लूंगा। क्षत्रिय जब अपनी प्रतिज्ञा पूरी नहीं कर पाते तो आत्मदाह ही करते हैं। लेकिन मैं उसे ढूँढ़कर ही रहूँगा। धरती का चप्पा-चप्पा छान डालूँगा।'

सचमुच, कुलपुत्र ने चप्पा-चप्पा छानना ही शुरू कर दिया। जंगल, बाग-बगीचे, खेत-खलिहान, मरघट, मन्दिर, मद्यशालाएँ, जुए के अड्डे, चोरों की पल्लियां, नदी के धार-कछार, खाई-खन्दक, पर्वत-टीले सबको देखता-छानता वह रात-रात भर भटकता रहता था। बीतते-बीतते इस अभियान में कुलपुत्र को बारह वर्ष बीत गए। इन बारह वर्षों में वह युवा से प्रौढ़-जैसा बन गया था। दाढ़ी बढ़ गई थी और थक भी गया था, पर निराश नहीं हुआ था।

बारह वर्ष बाद का एक दिन—चाँदनी रात। एक टीले के नीचे कुलपुत्र ने एक व्यक्ति को देखा। सन्देह हुआ तो लपककर उसके पास पहुँचा। कुलपुत्र को देखते ही संदिग्ध व्यक्ति भागने लगा। सन्देह निश्चय में बदल गया और कुलपुत्र पूरा बल लगाकर दौड़ने लगा। थोड़ी ही देर में उसने अपने शत्रु को दबोच लिया। वह गिड़गिड़ाने लगा—

'मुझे मत मारो, मैं तुम्हारी शरण में हूँ।'

'अभी तुझे नहीं मारूंगा।' कुलपुत्र ने कहा—'तुझे मैं वहीं ले जाकर मारूंगा, जहाँ मेरे भाई ने दम तोड़ा था।'

कुलपुत्र ने अपने सिर की पगड़ी खोल ली और उसी से भ्रातृहन्ता के हाथ-पैर बाँधकर पीठ पर लाद लिया और चल दिया गाँव की ओर। रात-भर चलता रहा। दिन में भी रुका नहीं। बदला लेने की तीव्रतम भावना ने उसकी चाल बढ़ा दी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

थी। शत्रुता के आक्रोश ने शत्रु का बोझ भी हल्का कर दिया था। पीठ पर लदे शत्रु ने कहा—

'मुझे खोल दो तो मैं तुम्हारे साथ पैदल चलूंगा।'

'मैं इतना मूर्ख नहीं हूँ कि अब तुझे भागने का अवसर दूं।' कुलपुत्र बोला—'तुझे लेकर चलना मेरे लिए कठिन नहीं है। बारह साल की तपस्या के बाद तू मुझे मिला है।'

× × ×

शत्रु को घर के आँगन में पटककर कुलपुत्र ने आवाज लगायी—

'माँ, तेरे पुत्र और मेरे भाई का हत्यारा अब तेरे सामने है। यह खड्ग ले मेरा और अपने पुत्र का बदला ले ले।'

ठकुरानी कुछ कहती कि बंधन में पड़ा शत्रु गिड़गिड़ाने लगा—

'मुझे मत मारो। मैं तुम्हारा दास हूँ। जीवन-भर तुम्हारी सेवा करूंगा। मैं तुम्हारी शरण में हूँ। मेरे मरते ही मेरी बूढ़ी माँ रोते-रोते प्राण दे देगी। मेरे बच्चे अनाथ हो जायेंगे। पत्नी विधवा हो जाएगी। छोड़ दो मुझे।'

'शत्रु, अग्नि, सर्प और रोग—इन्हें कभी शेष नहीं छोड़ना चाहिए।' कुलपुत्र ने कहा—'मैं अपने भाई का बदला तुझे मार कर ही लूंगा। बस, तू अपने इष्ट का स्मरण कर ले।'

यह कह कुलपुत्र ने खड्ग ऊपर उठाया तो उसकी मां चीखने लगी—

'नहीं ईं ईं। इसे मत मार। छोड़ दे इसे।'

'माँ! क्या तू पागल हो गई है? क्या तू अब ठकुरानी नहीं रही?' कुलपुत्र ने आश्चर्य से कहा—'बारह वर्ष भटकने के बाद हाथ आये शत्रु को बचाना चाहती है तू?'

'तब मैं होश में नहीं थी, जब मैंने तुझे ललकारा था।' क्षत्राणी ने कहा—'इसे मार देने का एक ही कारण है अज्ञान और इसे छोड़ देने के अनेक कारण हैं।

'वत्स, इसे मारना अधर्म के अतिरिक्त कुछ भी नहीं। इसे मारने से 'कुछ भी' लाभ नहीं होगा—हानि-ही-हानि है। पर इसे न मारने से धर्म ही धर्म है और लाभ-ही-लाभ हैं।'

'लाभ-हानि की बात तो व्यापारियों के लिए है।' कुलपुत्र बोला—'क्षत्रिय हानि सहकर भी अपने क्षत्रिय धर्म का पालन करते हैं।'

'तो तू क्षात्र धर्म जानता है!' क्षत्राणी बोली—'रक्षा करना क्षत्रिय का धर्म है, मारना नहीं। फिर शरणागत को मारना तो कायरों का काम है, क्षत्रियों का नहीं। शरणागत की रक्षा तो अपने प्राण देकर भी की जाती है।

'पुत्र, इसे मारकर क्या तू अपने दिवंगत भाई को पा सकेगा? कभी नहीं पा सकता। लेकिन इसे मुक्त करके तू इसे भाई के रूप में पा सकता है। सबसे बड़ा क्षत्रिय तो वह है जो शत्रु को भी मित्र बना ले।

'वत्स, मैं जानती हूँ कि पुत्र के मरने पर माँ पर क्या बीतती है। जो मुझ पर बीती है, वही इसकी माँ पर भी बीते इसकी कल्पना से भी मैं कांपने लगती हूँ।

'बेटा, तू अपने असली शत्रु को नहीं जानता। मारना है तो पहले उसी को मार। क्रोध ही तो तेरा शत्रु है। क्रोध बुद्धि को इतना भ्रष्ट कर देता है कि वह रक्त के दाग को रक्त से धुलवाने का असंभव प्रयास करवाता रहता है। अग्नि से अग्नि कभी बुझ पाई है, जो तू आज बुझाना चाहता है।

'लाड़ले, एक अग्नि तब जली थी, जब इसने तेरे भाई को मारा था। दूसरी अग्नि यह जल रही है, जब तू इसे मारने को खड़ा है। फिर इसका पुत्र तुझे मारेगा। फिर तेरा पुत्र इसके पुत्र को मारेगा। पुत्र न भी मारे तो अगले जन्म में यह तुझे मारेगा, फिर उससे अगले जन्म में तू इसे और जन्म-जन्मां-

(शेष पृष्ठ ५१२ पर)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org